International Journal of Sanskrit Research
अनन्ता

ISSN: 2394-7519
IJSR 2018; 4(5): 156-162
© 2018 IJSR
www.anantaajournal.com
Received: 18-07-2018
Accepted: 22-08-2018

डॉ. रमा सिंह
सह-आचार्या, संस्कृत विभाग, देशबन्धु महाविद्यालय, दिल्ली विश्वविद्यालय, कालकाजी, नई दिल्ली

Correspondence
डॉ. रमा सिंह
सह-आचार्या, संस्कृत विभाग, देशबन्धु महाविद्यालय, दिल्ली विश्वविद्यालय, कालकाजी, नई दिल्ली

‘अमरुशतक’ का काव्यसौन्दर्य : एक अवलोकन

डॉ. रमा सिंह

सारांश
हालकृत प्राकृतकाव्य सतसई की भाँति संस्कृत-साहित्य के शृङ्गारप्रधान मुक्तककाव्यों में अमरुशतक आठवीं सदी की एक अन्यतम कृति है। महाकवि अमरुकरचित इस शृङ्गारिक काव्य में भाषा, भाव, रस, गुण, अलंकार छन्दादि काव्यसौन्दर्याधायक तत्त्वों का सुन्दर समायोजन पदे-पदे दृष्टिगत होता है । कवि की रचनाशैली वैदर्भी है । भाषा सरल, सहज एवं माधुर्यगुणयुक्त है । संयोग एवं विप्रलम्भ शृङ्गार दोनों प्रकार के शृङ्गार का दर्शन यहाँ होता है । शब्दालंकार और विशेष रूप से अर्थालंकार के प्रयोग से शृङ्गारप्रधान यह काव्य अत्यन्त रमणीय हो गया है । शार्दूलविकीडित और स्रग्धरा जैसे जटिल छन्दों के प्रयोग से भी रसप्रवाह में कोई बाधा उत्पन्न नहीं होती है। प्रस्तुत शोध-लेख के माध्यम से अमरुशतक में निबद्ध काव्यसौन्दर्यधायक एवं काव्यशोभाकारक उपर्युक्त तत्त्वों से सहृदय को परिचित करना ही उद्देश्य है ।

शब्दकुञ्जिका - अमरुशतक, अमरुक, मुक्तक, प्राकृत, हाल, सतसई, माधुर्य, वैदर्भी, शृङ्गार, रीति, आलम्बन, उद्दीपन, अलंकार, छन्द, वार्णिक।

प्रस्तावना
रससिद्ध कवियों की लम्बी परम्परा में महाकवि अमरुक का नाम अग्रगण्य है। उनके द्वारा रचित अमरुशतक संस्कृत की मुक्तक काव्यपरम्परा के अन्तर्गत आनेवाला अत्यन्त सम्मानित शतक है। इस शतककाव्य के पद्यों में भारतीय काव्यशास्त्र एवं कामशास्त्र का सुन्दर गुम्फन हुआ है। इस शृङ्गारिक काव्य का प्रत्येक पद्य स्वयं में पूर्ण है। महाकवि अमरुक का ‘अमरुशतक’ हाल और भर्तृहरि की समृद्ध परम्परा के अन्तर्गत आता है। अमरुक के मुक्तकों में प्रबन्धों की भांति ‘रसबन्धाभिनिवेश’ का अद्भुत व सफल प्रयोग प्राप्त होता है। प्राचीन भारत में जीवन के लिए उपयोगी अनेक शास्त्रों के साथ काव्यशास्त्र का भी आविर्भाव हुआ है। साहित्यशास्त्र में नायक और नायिकाओं के भेदों का विवेचन किया गया। डॉ. मिशेल ने अमरुशतक को मूलत: ‘शृंगारतिलक’ की ही भांति विभिन्न रसों से युक्त बताया है।[1]
अमरुशतक के मुक्तक में प्रणय की विविध स्थितियों का अंकन कवि ने अत्यन्त कुशलता से किया है। अमरुशतक में अंकित चित्रों में मतवाले पौर जीवन के चित्र ही अधिक हैं। भाषा, भाव, प्रकृतिचित्रण, गुण-रीति, रसादि के अपूर्व समन्वय से काव्य अत्यन्त रमणीय व सौन्दर्ययुक्त हो गया है। उक्त काव्यघटक-तत्त्वों के आलोक में उनके इस शतककाव्य में निरूपित सौन्दर्य का अवलोकन किया जाता है -

(i) भाषाशैली - महाकवि अमरुक के मुक्तकों की भाषा संस्कृत का वह स्वरूप है जो पूर्वतन महाकाव्यों में ही उपलब्ध होता है। इनके मुक्तकों पर जैसे हाल की ‘सतसई’ का प्रभाव पड़ा उसी प्रकार अनलंकृत प्राकृत भाषा की वाक्य रचना और शब्दसंहति का भी प्रभाव पड़ा। यह महत्त्वपूर्ण बात है कि जब परवर्ती

---
1 शृंगारतिलक-भूमिका, पृ. 9-11

संस्कृत महाकाव्यों में दोष अर्थात् पराभव युग के लक्षण स्पष्ट दीख रहे थे, उनकी वर्ण्यवस्तु, भाषा और सुरुचि पर ह्रासोन्मुख युग की छाया पड़ रही थी, अलंकारों, शब्दाडम्बर तथा शास्त्रीय भारकारी विस्तारों का प्रभाव पड़ रहा था, ऐसे समय में अमरुक के अमरुशतक के मुक्तकों में सरल, सरस, सीधी-सादी हृदयावर्जक भाषा एवं वर्ण्य-वस्तु की निबद्धता दिखाई पड़ती है। अमरुक के मुक्तकों की भाषा की प्रकृति अलंकृत शैली के प्रभाव से बिल्कुल अछूती रही। इसी कारण इसमें अभिव्यञ्जना की अतुलराशि आश्रय पा सकी । जैसे -

लिखन्नास्ते भूमिं वहिरवनतः प्राणदयितो
निराहाराः सख्यः सततरुदितोच्छूननयनाः।
परित्यक्तं सर्वं हसितपठितं पञ्जरशुकै-
स्तवावस्था चेयं विसृज कठिने! मानमधुना।। [2]

मानिनी को कोई सखि सीखा रही है। हे कठोर हृदय वाली! बस अब मान छोड़ो, देखो तुम्हारे प्राणप्रिय की कैसी बुरी दशा है। बेचारा आँखों को झुकाये बाहर बैठा पागलों की तरह जमीन को खरोंच रहा ह ै। प्यारी सखियों ने भोजन छोड़ दिया है । हमेशा रोने से उनकी आँखें सूज गयी हैं । पिंजड़े के तोतों ने तुम्हारे शोक के कारण हँसना, पढ़ना छोड़ दिया है और तुम अभी भी मान किए बैठी है। भला तुम्हें तनिक भी दया नहीं आती। जल्दी मान छोड़ो । आचार्य मम्मट ने इस पद्य को ध्वनिकाव्य के उदाहरण में भी दिया है ।[3] अमरुशतक की भाषा अत्यन्त प्रासादिक, प्रवाहपूर्ण एवं प्राञ्जल ह ै। शब्दों के चयन में कवि की सूक्ष्म दृष्टि का ज्ञान होता है। शार्दूलविक्रीडित जैसे विशाल छन्दों का प्रयोग करने पर भी दीर्घ समासों का अभाव है । इनकी कृति शुद्ध वैदर्भी रीति का उत्कृष्ट उदाहरण है। कदाचित् इसकी प्रसन्न मधुर और प्राञ्जल शैली देखकर ही लोगों ने यह कल्पना की हो कि यह शंकराचार्य की कृति है । संस्कृत के गीतिकाव्यों में अमरुशतक का स्थान मूर्धन्य है। सतत् रसस्यन्दी पद्यों द्वारा मानवीय प्रणय का सरस चित्रण किया गया है । एक ओर पति को परदेश जाते देख कामिनी की हृदय-विह्वलता का मार्मिक चित्र है -

प्रस्थानं वलयैः कृतं प्रियसखैरस्त्रैरजस्त्रं गतं
धृत्या न क्षणमासितं व्यवसितं चित्तेन गन्तुं पुरः।
यातुं निश्चितचेतसि प्रियतमे सर्वे समं प्रस्थिताः
गन्तव्ये सति जीवित! प्रियसुहृत्यार्थः किमु त्यज्यते।।[4]

दूसरी ओर पति के शुभागमन में अंग-प्रत्यंग से हर्ष की अभिव्यक्ति करने वाली सुन्दरी का कमनीय वर्णन है -

दीर्घावन्दनमालिका विरचिता दृष्ट्यैव नेन्दीवरैः
पुष्पाणां प्रकरं स्मितेन रचितो नो कुन्दजात्यादिभिः।।
दत्तः स्वदेमुचा पयोधरभरेणार्धो न कुम्भाम्भसा
स्वैरेवावयवैः प्रियस्य विशतस्तन्व्या कृतं मङ्गलम्।।[5]

इन दोनों पद्यों में शब्दों की सुमधुर माला प्रयुक्त हुयी है। वैदर्भी रीति की सभी विशेषताएँ इनके पद्यों में मिलती है। कवि की रससिद्धता का यह प्रमाण है कि समग्र (समस्त) रचना में हृदय पक्ष का ही प्राधान्य है । गाथासप्तसती और वज्जालग्ग की प्राकृत गीतियों के पश्चात् संस्कृत साहित्य में ऐसी मर्मभेदी मुक्तक रचना नहीं मिलती। इनके परवर्ती संस्कृत और हिन्दी के स्वच्छन्द गीतकार इनसे अत्यन्त प्रभावित हुए हैं। गोवर्धनाचार्य और पण्डितराज तथा हिन्दी के बिहारी, मतिराम, पद्माकर आदि ने अपनी अनेक कविताओं में इनसे भाव अपनाये हैं । महाकवि अमरुक पर पूर्ववर्ती कविकुलगुरु कालिदास और श्री हर्षदेव आदि के गीतों तथा प्राकृत गाथाओं का प्रभाव यत्र-तत्र देखा जाता है । यथा -

क्षिप्तो हस्तावलग्नः प्रसभमभिहतोऽप्याददानोंऽशुकान्तं,
गृह्णान् केशेष्वपास्तश्चरणनिपतितो नेक्षित संभ्रमेण।
आलिङ्ग्न्योऽवधूतस्त्रिपुरयुवतिभिः साश्रुनेत्रोत्पलाभिः
कामीवार्द्रापराधः स दहतु दुरितं शांभवो वः शराग्निः।।[6]

भगवान शंकर के बाण का वह अनल आप लोगों के दुःखों को भस्म कर दे, जिसे त्रिपुर की युवतियों ने अपने कमल-नयनों में आँसू भरकर हाथ से झटक दिया और साड़ी का छोर पकड़ने पर उसे मींज दिया। बालों को पकड़ने पर दूर हटा दिया और जब पैरों पर पड़ा तब सम्भ्रम से देखा ही नहीं । आलिंगन के लिए बढ़ने पर दूर हटा दिया । (जैसे मानिनी नायिका के पास कामी जाकर उसकी अभ्यर्थना के लिए साड़ी का पल्ला पकड़ता है तो वह क्रोध से देखती तक नहीं, आलिंगन के लिए बढ़ने पर उसकी उपेक्षा कर देती है उसी प्रकार त्रिपुरदाह के समय शिवजी का बाणानल जब प्रदीप्त हो उठा तक राक्षस बन्धुओं ने उससे हर तरह से अपना रक्षण करना चाहा) । यहाँ पर त्रिपुरारि का प्रभावातिशय मुख्यार्थ है और ईर्ष्याविप्रलम्भ उसका अंग है। आचार्य आनन्दवर्धन ने इसे संकीर्ण रसबद्ध अलंकार के उदाहरण में रखा है ।[7] महाकवि अमरुक की भाषा प्रेम के चित्रणों में अत्यन्त भावविह्वल हो गयी है। उन्होंने सूक्ष्म अन्तःवृत्ति का चित्रण भी यथेष्ट शब्दों में किया ह ै। यथा -

कथमपि सखि क्रीड़ाकोपाद्व्रजेति मयोदिते
कठिनहृदयः शय्यां त्यक्त्वा बलाद्गत एव सः।
इति सरभसं ध्वस्तप्रेम्णि व्यपेतघृणे स्पृहा
पुनरपि हतव्रीडं चेतः करोति करोमि किम ्।।[8]

---

2 अमरुशतक, श्लोक-7

3 काव्यप्रकाश, 4/43 पर, ध्वनि का उदाहरण, पृ. 179

4 अमरुशतक, श्लोक-35

5 अमरुशतक, श्लोक-45

6 वही, श्लोक-2

7 आनन्दवर्धन - ध्वन्यालोक-2/5
प्रधानेऽन्यत्र वाक्यार्थे यत्राङ्ग तु रसादयः।
वाक्ये तस्मिन्नलङ्कारो रसादिरिति मे मतिः।।

8 अमरुशतक, श्लोक-15

हे सखि! किसी प्रकार प्रणयकोप से मैंने कह दिया कि तुम चले जावो। बस इतना सुनते ही वह कठोर हृदय बलात् सेज त्यागकर चला गया। शीघ्र इस प्रकार प्रेम को तोड़ देनेवाले उस निर्दय व्यक्ति के पास मेरा यह निर्लज्ज हृदय अब भी दौड़-दौड़ कर चला जाता है, मैं क्या करूँ?

इस सूक्ष्म अन्तःवृत्ति का चित्रण कवि की सूक्ष्म मनोवैज्ञानिक दृष्टि का बोध कराता है। सीधी सरल उक्ति में कवि ने भावों का सिन्धु ही तरङ्गायित कर दिया है। न तो जानबूझ कर किसी अलंकार की योजना का प्रयास है, न किसी कलात्मक चमत्कार को लाने का प्रयास। अमरुक के काव्य की भाषा की यही विशेषता है जिस पर प्राचीनकाल से भारतीय सहृदयजन मुग्ध होते आ रहे हैं ।

अमरुकशतक के पद्यांक 12 का अनुसरण जगद्विनोद के एक पद में है –

प्रहरविरतौ मध्ये वाह्नस्ततोऽपि परेण वा
किमुत सकले याते वाह्नि प्रिय! त्वमिहैष्यसि।
इति दिनशतप्राप्यं देशं प्रियस्य यियासते
हरति गमनं बालालापैः सवाष्पगलज्जलैः।।[9]

पद्यांक 22 का बिहारी ने अनुसरण किया है –

एकस्मिन्शयने विपक्षरमणीनामग्रहे मुग्धया
सद्यः कोपपराङ्मुखं गलवितया चाटूनि कुर्वन्नपि ।
आवेगादवधीरितः प्रियतमस्तूष्णी स्थितस्तत्क्षणा
न्माभून्म्लान इवेत्यमन्दवलितग्रहीवं पुनर्वीक्षितः।।[10]

आचार्य रुय्यक ने इसे अमरुशतक के चालीसवें प्रेयोलङ्कार के उदाहरण में रखा है ।[11]

पाश्चात्य विद्वानों द्वारा अमरुकशतक के पद्यों का अनुवाद अमरुक की भाषा में स्वाभाविकता एवं वर्णनों की उत्कृष्टता का द्योतक है। अमरुक का काव्यसर्जन शिष्ट, अभिजात, कलात्मक वातावरण एवं संस्कृत के विशिष्ट परिष्कार एवं संस्कार से समन्वित होकर काव्य जगत् में मुखरित हो गया। अर्जुनवर्मदेव की उक्ति उचित प्रतीत होती है –

अमरुककवित्वऽमरुकनादेन विनिह्नुता न सञ्चरति ।
शृंगारभणितिरन्या धन्यानां श्रवणयुगलेषु। ।[12]

अमरुशतक के प्रत्येक श्लोक का सारगर्भ विवेचन करने पर उनके काव्यशास्त्र एवं कामशास्त्र के ज्ञान का अद्भुत समन्वय प्राप्त होता है। अनुकूल, कोमल पदों से युक्त,शृंगार के उत्कर्ष से समन्वित काव्य में वस्तु अलंकार और रसध्वनि की प्रतिष्ठा अमरुक ने की है। अमरुक के मुक्तक सारे आदर्शों से अनुप्राणित प्रतीत होते हैं।

अमरुक ने छोटे से शतक काव्य में भावों को इस प्रकार समाहित किया है कि यह 'गागर में सागर' भरने के समान प्रतीत होता है। इस प्रकार अमरुकशतक का कवित्व डमरु के समान नादयुक्त है जिसकी आवाज के आगे अन्यशृंगारिक कवियों की उक्तियाँ दब जाती हैं ।

(ii) प्रकृतिचित्रण – महाकवि अमरुक का प्रकृति-चित्रण संश्लिष्ट चित्र उपस्थित करने वाले कवि कालिदास के समान अतिरमणीय है । प्रकृति के सुन्दर चित्रों को भाषा की स्वाभाविकता और अधिक मुखरित करती है। अमरुशतक की विशेषता एवं प्रसिद्धि को देखते हुए पाश्चात्य विद्वानों ने भी इसके पद्यों का अनुवाद अपनी भाषा में किया है। वे इन पद्यों की सरलता एवं स्वाभाविकता से प्रभावित प्रतीत होते हैं। जर्मन विद्वान फ्रेडरिक (Friedrich) ने इसके कुछ अंशों का अनुवाद जर्मन भाषा में किया है[13] –

तदवक्ताभिमुखं मुखं विनमितं दृष्टिः कृता पादयो
स्तस्यालापकुतूहलाकुलतरे श्रोत्रे निरूद्धे मया ।
पाणिभ्यां च तिरस्कृतः सपुलकः स्वेदोदृमो गण्डयोः
सख्यः किं करवाणि यान्ति शतधा यत्कञ्चुके संघयः।।[14]

इसकी हिन्दी इस प्रकार है – "लज्जा के कारण प्रियतम के समक्ष ही मैं अपनी दृष्टि को उनके पैरों पर रख देती हूँ । मेरे कान उनके शब्दों के स्पर्श के लिए व्याकुल हैं पर मैं उन्हें बन्द कर देती हूँ । मेरे कपोलों से खेद की धारायें बहने लगती हैं और मैं उन्हें अपने हाथों से ढँक लेती हूँ । हे सखि! यह मैं कुछ करने में विवश हो जाती जबकि मेरी चोली के बन्धन ही खुल गए ।"

श्रोडर (Schroeder) ने अमरुशतक के 82वें पद्य का जर्मन अनुवाद किया है ।[15] श्लोक है –

शून्यं वासगृहं विलोक्य शयनादुत्थाय किञ्चित् क्षणै-
र्निद्राव्याजमुपागतस्य सुचिरं निर्वर्ण्य पत्युर्मुखम् ।
विस्रब्धं परिचुम्ब्य जातपुलकामालोक्य गण्डस्थलीं
लज्जानम्रमुखी प्रियेण हसता बाला चिरं चुम्बिता ।।[16]

हिन्दी भाषान्तर इस प्रकार है – "नायिका शयन गृह में अकेली प्रियतम के साथ है। वह युवती नारी अपने पति को घोर निद्रा में पाती है । वह धीरे से अपने मुख को बिछावन से उठाती है और बहुत देर तक अपने पति को निहारती है। पति अपने को निद्रामग्न दिखाता है ।

---

9 अमरुशतक, श्लोक-12
पद्माकर जगद्विनोद के पृष्ठ 250 में इसके अनुरूप पद की रचना है।
सौ दिन को मारग तहाँ कौ बेगि मांगि बिदा।
प्यारी पद्माकर प्रभात राति बीते पर।।

10 अमरुशतक, श्लोक-22; बिहारी, रत्नाकर-649
खिंचै मान अपराध हूँ चलिगै बढै अचैन।
सुरत दीठि तजि रिस खिसी हंसे दुँन के नैन।

11 अलंकार सर्वस्व, पृ. 237 (काव्यमाला संस्करण)

12 अर्जुनवर्मदेव – अमरुकशतकम्, पृ. 1

13 Friedrich, 38 Liedchen Von. Amaru, p. 127

14 अमरुशतक, श्लोक-11

15 Schroeder, Leopold Von – Mangoblueten, p. 77

16 अमरुशतक, श्लोक-82

अब वह बारंबार उनको चूमती है तथा जब उस युवती के कपोल पर के छोटे-छोटे रौयें रोमांच के कारण खड़े हो जाते हैं तब वह प्रियतम अपने मुख और सिर को ऊपर उठाता है और हंसते हुए बारंवार प्रियतमा को चूमता है ।"[17]

अमरुशतक के 70 वें श्लोक का जर्मन अनुवाद जे.जे. मेयर ने किया है ।[18]

(iii) गुण विवेचन - मानवीय प्रणय का सरस चित्रण भावानुकूल भाषा द्वारा किया है। सहज, सरल, प्राञ्जल और प्रवाहयुक्त भाषा व्यंगार्थ से चमत्कृत होती है।

माधुर्य गुण काव्य की आत्मा रस से अपृथक् धर्म है। वैदर्भी रीति काव्य का संस्थान है और उपमा आदि अलंकार कटक-कुण्डल आदि आभूषणों की भांति शब्द और अर्थ के सौन्दर्यवर्धक है ।[19] गुणों के अभाव में काव्य का महत्त्व समाप्त हो जाता है। माधुर्य गुण का सम्भोग शृंगार में अधिक वियोग शृङ्गार में अधिकाधिक महत्त्व होता है। माधुर्य गुण के व्यञ्जक वर्ण अनुनासिक (अपने-अपने वर्ग का अन्तिम अक्षर) होता है, यथा - न्, म्, ङ्, ण्, न ्। समासरहित एवं अल्पसमास युक्त भाषा ही मधुर कही जाती है । यथा -

दीर्घा वंदनमालिका विरचिता दृष्ट्यैव नेन्दीवरैः
पुष्पाणां प्रकरः स्मितेन रचितो नो कुन्दजात्यादिभिः।
दत्तस्वे दमुचा पयोधरयुगेनार्ध्यो न कुम्भाम्भसा
स्वैरेवावयवैः प्रियस्य विशतरस्तन्व्या कृत मङ्गलम ्।।[20]

इसमें किसी नायिका का वर्णन है जो प्रिय के आगमन पर स्वयं को तथा घर को सजाती है । नायिका के सौन्दर्य एवं उत्कट प्रेम का वर्णन कितनी कुशलता से किया गया है। माधुर्य गुण के व्यञ्जक वर्णों (म्, ङ्, ण्, न्) का प्रयोग बड़ी सुंदरता से किया गया है । सम्पूर्ण पद्य प्रेम की झंकार से गुञ्जित है । इसी प्रकार अन्य पद्य भी सौन्दर्याभिव्यक्ति का सुन्दर उदाहरण है -

वाले। नाथ विमुञ्च मानिनि। रुषं रोषन्मया किं कृतं
खेदोऽस्मासु न मेऽपराध्यति भवान्सर्वेऽपराधा मयि।
तत्किं रोदिषि गद्गदेन वचसा कस्याग्रतो रुद्यते
नन्वेतन्मम का तवास्मि दयिता नास्मीत्यतो रुद्यते ।।[21]

नायिका का नायक के साथ वार्तालाप का वर्णन है। नायिका अपने प्रियतम को किसी अन्य के अनुराग में आसक्त जानकर मान करती है। दोनों के वार्तालाप में प्रयुक्त शब्दावली माधुर्य गुण का व्यंजक है यथा - न्, म्, न् । म् और न् का प्रयोग अत्यधिक हुआ है । माधुर्य की अभिव्यञ्जना अति सुन्दर है। इस प्रकार अमरुकशतक शृंगारिक काव्य होने से सर्वत्र माधुर्य की छॅटा बिखरी हुई है । प्रथम और द्वितीय श्लोक में गौड़ी रीति होने से ओज गुण की अभिव्यञ्जना दिखाई पड़ती है । यथा -

ज्याकृष्टिबद्धखटकामुखपाणिपृष्ठ-
प्रेङ्खन्नखांशुचयसंवलितोऽम्बिकायाः।
त्वां पातु मञ्जरितपल्लवकर्णपूर-
लोभभ्रमद्भ्रमरविभ्रमभृत्कटाक्षः।।[22]

यहाँ पर अम्बिका के कटाक्ष की तुलना प्रत्यंचा खींचे धनुष से की गयी है । अम्बिका का कटाक्ष जो नेत्रों द्वारा कान तक विस्तृत मालूम पड़ता है । (धनुष जो कानों तक खींची गयी प्रत्यंचा वाला है) आपकी रक्षा करें । यहाँ पर शृंगार पक्ष में अम्बिका का कटाक्ष और ओजगुण में प्रत्यंचा चढ़ा धनुष ये दोनों रसों का सुंदर समन्वित रूप है ।

इसी प्रकार दूसरा पद्य शिव के द्वारा त्रिपुरदहन का व त्रिपुरसुन्दरियों के शृंगार का वर्णन है। शिव द्वारा छोड़े गए बाण के अनल की तुलना प्रणय के अपराधी कामी (नायक) से की गयी है क्योंकि जब परस्त्रीगमन का ज्ञान नायिका को हो जाता है तो पत्नी को मानता हुआ नायक मानों उन स्त्रियों का स्पर्श करते बाणानल की तरह कर रहा है क्योंकि स्त्रियाँ उसको अग्नि के समान झटक देती है। (इस समय वह इनकी पीड़ा का कारण है)।[23]

इन दो पद्यों के अतिरिक्त ओज गुण अन्यत्र कहीं नही मिलता।

(iv) रीति विवेचन - √रीङ् गतो धातु से क्तिन् प्रत्यय के योग से रीति शब्द निष्पन्न होता है। शब्द और अर्थ के आश्रित रचना-चमत्कार का नाम रीति है, जो माधुर्य, प्रसाद और ओज गुणों के द्वारा चित्त को दीप्त और परिव्याप्त करती हुयी रसदशा को पहुँचती है। अमरुकशतक में माधुर्य गुण का सौन्दर्य होने के कारण इनकी रीति वैदर्भी है ।

वैदर्भी रीति की यह विशेषता है कि इसमें ओज, प्रसाद आदि सभी गुण होते हैं । विशिष्ट पद की रचना को रीति कहते हैं ।[24]

सुकवि वक्ता, सुवर्ण्य अर्थ और शब्द-शास्त्र (व्याकरण) पर अधिकार रहने पर भी जिसके बिना कविवाणी से मधु नहीं चूता है, वही वैदर्भी रीति है। इसका उदाहरण अतिरमणीय है -

मुग्धे मुग्धतयैवनेतुमखिलः कालः किमारभ्यते
मानं धत्स्व धृतिं बघान ऋजुतां दूरे कुरु प्रेयसि
सख्यैवं प्रतिबोधिता प्रतिवचस्तामाह भीतानना
नीचैः शंस हृदि स्थितो हि ननु मे प्राणेश्वरः श्रोष्यति।।[25]

---

17 Schroeder, Leopold Von – Mangoblueten, p. 77

18 मेयर, जे.जे. कृत अमरुशतक का अनुवाद काव्यसंग्रह के द्वितीय भाग में छपा है । पृ. 20

19 विश्वनाथ, आचार्य - साहित्य दर्पण, वृत्ति 1/2
काव्यस्य शब्दार्थौ शरीरम् रसादिश्चात्मा, गुणाः शौयादिवत् दोषाः काणत्वादिवत्, रीतयोऽवयव संस्थानविशेषवत् अलंकाराः कटककुण्डलादिवत् ।।

20 अमरुशतक, श्लोक-45

21 अमरुशतक, श्लोक-57

22 अमरुशतक, श्लोक-1

23 अमरुशतक, श्लोक-2

24 वामन, आचार्य - काव्यालंकार सूत्र 2/7, पृ. 15
विशिष्टा पदरचना रीतिः।।7।। समग्रगुणा वैदर्भी 2/11

मुग्धा नायिका के उत्कट प्रेम का मनोहर वर्णन है। इस प्रकार प्रथम और द्वितीय श्लोक को छोड़कर सर्वत्र वैदर्भी रीति है। प्रथम और द्वितीय श्लोक में ओज गुण होने से गौड़ी रीति है।[26] माधुर्य और सौकुमार्य गुणों के अभाव से तथा समास बहुल होने से यह गौड़ रीति अग्रपदों से युक्त रहती है । यथा –

ज्याकृष्टिबद्धखटकामुखपाणिपृष्ठ–
प्रेङ्खन्नखांशुचयसंवलितोऽम्बिकायाः।
त्वां पातु मञ्जरितपल्लवकर्णपूर–
लोभभ्रमद्भ्रमरविभ्रमभृत्कटाक्षः।।[27]

ज्याकृष्टिबद्ध इत्यादि समस्त पद में गौड़ी रीति है। गौड़ीरीति में ओजो गुण व्यञ्जित है ।

इसी प्रकार दूसरा पद्य भी इसी (गुण) रीति में निबद्ध है । महाकवि अमरुक के पद्य शृंगारिकता का पुट लिए हुए है। अतः रीति व गुण का भी उसी प्रकार सौन्दर्याभिव्यक्तिरूप निबद्ध है। वैदर्भी रीति का वर्णन सर्वत्र प्राप्त होता है।

(v) रसयोजना – अमरुशतक में मानव जीवन की असीम व्यापकता में से छोटे–छोटे चित्र लेकर उनको चौखटों में जड़ दिया गया है। ये चित्र रस की व्यापकता, भावों की उत्कृष्टता व भाषा की सरलता द्वारा सहृदय श्रोताओं (पाठकों) के हृदय को आकृष्ट करते हैं । महाकवि अमरुक रससिद्ध कवियों की परम्परा में विद्यमान है। अमरुकशतक का रसास्वादन सहृदय श्रोता शताब्दियों से कर रहे हैं ।

काव्य का मुख्य उद्देश्य रसानुभूति है। अमरुक ने रस को काव्य में महत्त्वपूर्ण तत्त्व माना है ।[28] अमरुकशतक काव्य की रसात्मकता पर मुग्ध होकर आचार्य आनन्दवर्धन ने इसके एक–एक पद्य को प्रबन्ध के समान माना है ।[29] एस.एन. दासगुप्ता ने भी इसकी प्रशंसा की है। अमरुकशतक में नायक–नायिका के मिलन की विभिन्न दशाओं का वर्णन किया है। साथ ही विरह का भी मार्मिक वर्णन मिलता है। नायक–नायिका की मनोदशाओं का यथार्थ चित्रण किया गया है। शास्त्रीय दृष्टि से स्त्री और पुरुष की अनुराग–वृद्धि शृंगार कही जाती है। शृंगाररस को पवित्र, उज्ज्वल और दर्शनीय माना गया है ।

अमरुकशतक के प्रथम टीकाकार वेमभूपाल (14 वीं शताब्दी ई.) ने ग्रन्थ के हस्तलेखों में अंकित शतक के वर्णन का अनुसरण करते हुए कहा है कि इसका उद्देश्य 'शृंगाररस' की व्याख्या करना है, प्रत्येक पद्य के विषय में यह दिखाने का प्रयत्न किया है कि वह एक विशिष्ट नायिका की दशा का वर्णन करता है ।[30] अमरुशतक मूलतः प्रेम के चित्रों का एक संग्रह है ।

शृंगार रस

शृंगार रस के दोनों पक्षों संयोग और वियोग का इस काव्य में सुन्दर वर्णन मिलता है। आलम्बन व उद्दीपन विभाव से युक्त एवं चिल्लाना, हँसना आदि अनुभाव वाला, निर्वेद ग्लानि आदि व्यभिचारी भाव वाला यह रस होता है। यहाँ के मुक्तकों में संचारी भावों के सजीव अंकन प्राप्त होते हैं । यथा – चिन्ता, मद, श्रम, आलस्य, व्रीडा, चपलता, हर्ष आवेग, जड़ता, विषाद, औत्सुक्य, उग्रता आदि। भावों के उतार–चढ़ाव का सूक्ष्म अंकन मुक्तकों में संभव हो सका है । रतिरस जड़ विलासिनी, प्रियतम के अपराध से उत्तेजित प्रगल्भा या चुपचाप आंसू गिराती मुग्धा का सुन्दर चित्रण है ।

संयोग शृंगार – नायक–नायिका मिलन, नायक द्वारा नायिका के सौन्दर्य वर्णन से काम भावना का उत्कर्ष ही इसका विषय है। यथा –

आलोलामलकावलीं विलुपितां विभ्रच्चलत्कुण्डलं
किंचिन्मृष्टविशेषकं तनुतरैः स्वेदाम्भसः शीकरैः।
तन्व्या यत्सुरतान्ततान्तनयनं वक्त्रं रतिव्यत्यये
तत्वां पातु चिराय किं हरिहरस्कन्दादिभिर्दैवतैः।।[31]

यहाँ नायक आश्रय है क्योंकि इसमें रति भाव अभिव्यक्त हुआ है। नायिका – आलम्बन विभाव है क्योंकि नायक का रति भाव नायिका को (स्मरण करने) देखने से निष्पन्न हुआ है । सूक्ष्म पसीने की बूंदे, हिलते हुए कुण्डल, बिखरी हुयी अलकें इसकी उद्दीपन विभाव है। नायक द्वारा उन घटनाओं को स्मरण कर रोमांचित होना अनुभाव है, भ्रम, खेद का आना व्यभिचारी भाव है। इसके अतिरिक्त अन्य भी श्लोकों में सुन्दर वर्णन है, यथा –

अलसवलितैः प्रेमार्द्रादैर्मुहुर्मुकुलीकृतैः
क्षणमभिमुखैर्लज्जालोलैर्निमेषपराङ् मुखैः।
हृदयनिहितं भावाकूतं वामद्भिरिपेक्षणैः।
कथय सुकृती कोऽयं मुग्धे! त्वयाद्य विलोक्यते ।।[32]

यहाँ पर नायिका आश्रय है। इसमें रतिभाव अभिव्यक्त हो रहा है । नायक आलम्बन विभाव है, जिसको देखकर या स्मरण करके नायिका में रतिभाव की निष्पत्ति हो रही है । नायिका का, लज्जा से मुँह फेर लेना आदि अनुभाव है । नायक की स्मृति द्वारा रोमांचित होना, यह व्यभिचारी भाव है । प्रथम मिलन की घटनाओं का स्मरण उद्दीपन विभाव है । अन्य उदाहरण –

---

25 अमरुशतक, श्लोक–70

26 वामन, आचार्य – काव्यालंकार सूत्र 2/12, पृ. 19
ओजः कान्तिमती गौड़ीया।।2।।

27 *वही*, श्लोक–1

28 आनन्दवर्धन – ध्वन्यालोक तृतीय उद्योत, कारिका–7

29 Dasgupta, S.N. – A History of Sanskrit Literature, pp. 156-159.
"It is a much smaller work but it is no less distinctive and delightful. Amaru describes with great delicacy of feding and gracefulness of imagery, the infinite moods and fancies of love. It's unexpected throughts and unknown impulses, creating varied and subtle situation."

30 कीथ, ए.बी., संस्कृत साहित्य का इतिहास, अनूदित – मंगलदेव शास्त्री, पृ. 230

31 अमरुशतक, श्लोक–3

32 अमरुशतक, श्लोक–4

करकिसलयं धूत्वा-धूत्वा विमार्गति वाससी,
क्षिपति सुमनोमालाशेषं प्रदीपशिखां प्रति ।
स्थगयति मुहुः पत्युर्नेत्रे विहस्य समाकुला,
सुरतविरता रम्या तन्वी मुहुर्मुहुरीक्षते ।।[33]

प्रस्तुत पद्य में नायिका आश्रय है इसी में रति भाव की अभिव्यक्ति हो रही है । नायक आलम्बन विभाव है। नायिका का रतिभाव नायक द्वारा ही सम्पन्न हुआ है । नायिका के रतिभाव को रात्रि का समय व नायक की आलिंगन, चुम्बनादि चेष्टायें उद्दीप्त कर रही हैं । नायिका का लज्जायुक्त होकर हँसना, पति की आँखें मूंदना आदि अनुभाव हैं। लज्जा की अनुभूति के कारण नायिका दीपक पर अपनी पुष्पमाला डाल देती है, जिससे वह बुझ जाये, इस प्रकार वह प्रफुल्लित हो रही है। हर्ष यहाँ पर व्यभिचारी भाव है ।
इसके अतिरिक्त अमरुशतक में संयोग श्रृंगार विषयक अनेक पद्य हैं ।[34]

वियोग शृङ्गार - नायक-नायिका का विरह इसकी पुष्टि करता है। यहाँ वियोग विप्रलम्भता को प्राप्तकर पुनः संयोग में परिवर्तित हो जाता है। कतिपय उदाहरण द्रष्टव्य हैं -

गते प्रेमाबन्धे प्रणयबहुमाने विगलिते,
निवृत्ते सद्भावे जन इव जने गच्छति पुरः।
तदुत्प्रेक्ष्योत्प्रेक्ष्य प्रियसखि! गतांस्तांश्च दिवसान्न
जाने को हेतुर्दलति शतधा यन्न हृदयस्।।[35]

यहाँ नायिका नायक के चले जाने पर विरह की दशा को प्राप्त होती है । नायिका का विप्रलम्भ भाव निष्पन्न हुआ है । अतः नायिका आश्रय है । नायक आलम्बन है । नायक की निष्ठुरता, सद्भाव रहित होना इस विप्रलम्भ को उद्दीप्त करता है । नायिका का हृदय टुकड़े-टुकड़े हो जाना रूप इच्छा अनुभाव है । विषाद नामक संचारी भाव है क्योंकि वह प्रेम में असामान्य सी हो गयी है । यह विरहवेदना इसको उद्दीप्त कर रहा है ।
दूसरा उदाहरण है -

देशैरन्तरिता शतैश्च सरितामुर्वीभूतां काननै
र्यत्नेनापि न याति लोचनार्थं कान्तेति जानन्नपि ।
उद्ग्रीवश्चरणार्थसद्भवसुधः प्रोन्मृज्य सास्त्रेदृशो
तामाशां पथिकस्तथापि किमथ ध्यायन्पुनर्वीक्षते ।।[36]

यहाँ विरही नायक अपनी प्रिया को स्मरण कर व्यथित हो रहा है । नायक आश्रय है । वियोग की निष्पत्ति इसमें हो रही है । नायिका-आलंबन विभाव है, जिसको स्मरण कर नायक का विरह निष्पन्न हो रहा है। प्रिया की पूर्वक्रियाएँ, उसकी आकृति विरह को उद्दीप्त कर रहे हैं । नायक द्वारा पैर उठाकर उचक-उचक कर देखने की इच्छा अनुभाव है । कम्पन स्वेद आदि सात्विक भाव है । उन्माद नामक संचारी भाव है ।
महाकवि अमरुक ने रसों के विरोध को भी निर्विरोध रूप में स्थापित किया है । महाकवि विभिन्न रसों का समन्वय एक ही श्लोक में बड़ी सुन्दरता से दिखाते हैं । यथा -

क्षिप्तो हस्तावलग्नः प्रसभमभिहतोऽप्याददानोऽशुकान्तं
गृहणन् केशेष्वपास्तश्चरणनिपतितो नेक्षितः संभ्रमेण।
आलिङ्गन्योऽवधूतस्त्रिपुरयुवातिभिः साश्रुनेत्रोत्पलाभिः
कामीवार्द्रापराधः स दहतु दुरितं शांभवो वः शराग्निः।।[37]

इस पद्य में अर्थश्लेष होने से शम्भु के प्रभावातिशय का द्योतक 'वीर रस' अंगी है और त्रिपुर सुन्दरियों का ईर्ष्यारूप 'विप्रलम्भ श्रृंगार' तथा साश्रुनेत्र इत्यादि से 'करुण' रस अंग बन गया है । इन रसों में यद्यपि विरोध का भाव रहता है । किन्तु कवि ने इस विरोध को उसी प्रकार समाप्त कर दिया जिस प्रकार महर्षि के आश्रम में साँप और नेवले का विरोध समाप्त हो जाता है ।
शम्भु के द्वारा त्रिपुरदहन के वर्णन में वीर रस की प्रतीति होती है । शम्भु आश्रय है । क्योंकि शम्भु में ही वीर रस उद्बुद्ध हो रहा है । बाणों से उत्पन्न अग्नि को सुन्दरियों का नेत्र जल सहज ही समाप्त कर रहा है । शम्भु के बाणों का निरंतर अग्नि रूप वर्षा करना शम्भु के उत्साह (स्थायी भाव) को जागृत कर रहा है । बाणों का बरसना उद्दीपन विभाव है। स्त्रियों का बाणों से कल्याण सिद्ध करना आदि अनुभाव है। स्मृति आदि व्यभिचारी भाव है ।
यहाँ नायिका में करुण रस की निष्पत्ति हो रही है। क्योंकि त्रिपुरदहन से कामयुक्त नायकों की मृत्यु होने पर वह नायिका मिलन की आशा को छोड़कर करुण रुदन करती है ।
इस प्रकार अमरुकशतक काव्य की रसानुकूल व्याख्या मनुष्यों के लिए नितान्त उद्वेजक है । अपनी इन्हीं विशेषताओं के कारण अमरुक शब्द-कवि नहीं अपितु रस कवि कहे जाते हैं ।

(vi) अलंकार योजना - महाकवि अमरुक का अमरुशतक यद्यपि श्रृंगारिक काव्य अथवा रस-प्रधान काव्य है तथापि उसमें स्वभाविक रूप से अलंकारों की छँटा व्याप्त है । अलंकार काव्य की शोभा में वृद्धि करते हैं । ये काव्य के अनिवार्य तत्त्व नहीं हैं । जैसे कटक-कुण्डल आदि स्त्री की सुन्दरता को बढ़ाते हैं उसी प्रकार अलंकार काव्य रूपी शरीर की सुन्दरता को बढ़ाते हैं। अमरुशतक काव्य में निम्न अलंकारों की छँटा काव्य में बिखरी है, यथा - उपमा, अर्थश्लेष, स्वाभावोक्ति, अनुमान, आक्षेप परिवृत्ति, प्रेतिषेधोक्ति, उत्तरालंकार, सूक्ष्म, समाहित, भाव, असंगति, सहोक्ति, लेश, अद्भुत

33 अमरुशतक, श्लोक-90

34 अमरुशतक, श्लोक-4, 8, 9, 10, 11, 14, 16, 17, 18, 19, 21, 22, 23, 24, 25, 26, 27, 28, 36, 37, 42, 44, 48, 58, 59, 72, 74, 77, 82, 88, 89, 90, 95, 101

35 अमरुशतक, श्लोक-43

36 अमरुशतक, श्लोक-99

37 अमरुशतक, श्लोक-2

व्याजोक्ति, विषम, समासोक्ति, प्रश्नोत्तर, समुच्चय, विरोधाभास, कारक-दीपक, अतिशयोक्ति, दीपक, अनुमान, उपायाक्षेप, उल्लास, असंगति, भ्रान्तिमान्, रूपक, सूक्ष्म, प्रहर्षण, यत्नोक्षेप, विशेषोक्ति, आशीर्वादात्मक रूपक का वर्णन मिलता है ।

(vii)छन्द विधान - संस्कृत साहित्य की प्रत्येक काव्यमय रचना छन्दोबद्ध होती है। अमरुकशतक का प्रत्येक पद्य छन्दोबद्ध है । मात्रिक व वार्णिक छन्द में से अमरुक ने वार्णिक छन्दों का ही अधिक प्रयोग किया है । इसमें भी सर्वाधिक प्रयोग शार्दूलविक्रीहित छन्द का किया है। इसके अतिरिक्त हरिणी, मन्दाक्रान्ता, शिखरिणी, वसन्ततिलका, स्त्रग्धरा एवं मालिनी का प्रयोग किया गया है ।

निष्कर्षत

अमरुशतक एक महत्त्वपूर्ण श्रृङ्गारिक रचना है । यह काव्य संस्कृत साहित्य में श्रृङ्गार रस के स्वच्छन्द काव्यों में अप्रतिम ग्रन्थ है । कवि ने यहाँ अपनी रससिद्ध सहज प्रतिभा का पूर्ण परिचय दिया है। इसकी भाषा अत्यन्त प्रसादपूर्ण, प्रवाहपूर्ण एवं प्राञ्जल है । शब्दचयन में कवि सर्वाधिक सफल रहे हैं । शुद्ध वैदर्भी रीति के प्रयोग से रचना सर्वग्राह्य, सरस व सहज बन गई है । रस, भाव, गुण, अलंकार, रीति, छन्दादि का अपूर्व समन्वय यहाँ दिखाई पड़ता है । शार्दूलविक्रीडित और स्त्रग्धरा जैसे लम्बे वृत्तों को अपनाने पर भी दीर्घ समस्त पदावली का अभाव दिखाई पड़ता है। प्राकृत गीतिकाव्यों में जो स्थान हालकृत सतसई का है, वही स्थान संस्कृतसाहित्य में अमरुशतक को प्राप्त है । कुल मिलाकर अपने काव्यगतवैशिष्ट्य व सौन्दर्य के कारण यह सर्वाधिक सफल गीतिकाव्य है ।

Conflict of Interest

The authors declare that they have no known competing financial interests or personal relationships that could have appeared to influence the work reported in this paper.

सन्दर्भ ग्रन्थसूची

1. अमरुशतकम्, महाकवि अमरुक, नारायण राम आचार्य काव्यतीर्थ, निर्णय सागर प्रेस, बम्बई, 1954
2. अमरुशतकम्, काव्यमाला गुच्छक-18, निर्णय सागर प्रेस, बम्बई, 1916
3. अमरुशतकम्, चिन्तामणि रामभद्र देवधर, पूना ओरियन्टल, सीरीज नं.-101, पूना, 1959
4. काव्यप्रकाश, सम्पादक - डॉ. नगेन्द्र, ज्ञानमण्डल लिमिटेड, वाराणसी, प्रथम संस्करण, विक्रम संवत्-2017
5. ध्वन्यालोक, सम्पादक - पं. दुर्गाप्रसाद, मुशीराम मनोहरलाल, दिल्ली, 1983
6. संस्कृत साहित्य का इतिहास, उपाध्याय, आचार्य बलदेव, शारदा निकेतन, वाराणसी, दशम संस्करण, 2001
7. संस्कृत साहित्य का आलोचनात्मक इतिहास, उपाध्याय, रामजी, रामनारायण लाल, वेणीमाधव, इलाहाबाद, 1961
8. संस्कृत साहित्य का इतिहास, गैरोला, वाचस्पति, चौखम्भा विद्याभवन, वाराणसी, 1978
9. संस्कृत साहित्य का इतिहास, शर्मा, उमाशंकर, चौखम्बा भारती अकादमी, वाराणसी, पुनर्मुद्रित संस्करण, 2014
10. भारतीय साहित्य का इतिहास, लेखक - विण्ट्रनिट्ज, अनूदित - झा, सुभद्रा, मोतीलाल बनारसीदास, दिल्ली, 1978

Eglish Book

11. A History of Sanskrit Literature, Keith, A.B., Oxford University Press, London, 1920.